International Journal of Advance and Applied Research (IJAAR)
Peer Reviewed Bi-Monthly

ISSN – 2347-7075
Impact Factor – 6.457
Vol.6 No.6 July–Aug 2019

'भूमंडलीकरण और हिंदी कविता'

Khilare Sindhu Daji
Assistant Professor, Dept. Of Hindi
Uma Mahavidyalaya Pandharpur, Dist- Solapur, 413304(MS)

सारांश :

भूमंडलीकरण शब्द पिछली सदी के उत्तरार्द्ध से सुनाई दे रहा है। भूमंडलीकरण के चार पहिए है निजीकरण, पूंजी बाजार का उदारीकरण, बाजार आधारित मूल्य निर्धारण और मुक्त बाजार। भूमंडलीकरण एक जटिल आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक प्रक्रिया है। भूमंडलीकरण का शाब्दिक अर्थ स्थानीय या क्षेत्रीय वस्तुओं या घटनाओं के विश्व स्तर पर विस्तार से हैं। भारत को इस वैश्वीकरण का लाभ भी मिल रहा है और साथ ही हनिया भी झेलनी पड़ रही है। जहां एक और हम 'वसुधैव कुटुंबकम' की भावना के साथ विकास के मार्ग पर ऊंचाइयों को छू रहे हैं, वहीं दूसरी ओर भूमंडलीकरण के साथ पाश्चात्य संस्कृति ने संपूर्ण भारतीय संस्कृति पर जोरदार प्रहार किया है। हिंदी कविता अपने तरीके से सबका जवाब दे रही है।

बीज शब्द: भूमंडलीकरण, निजीकरण, उदारीकरण, पूंजी - प्रवाह, व्यापार प्रवाह, प्रौद्योगिकी प्रवाह।

उद्देश्य :

1) भूमंडलीकरण की संकल्पना से परिचित कराना।
2) हिंदी कविता में चित्रत भूमंडलीकरण के स्वरूप को चित्रित करना।
3)भूमंडलीकरण का भारतीय संस्कृति पर पड़े प्रभाव को चित्रित करना।

भूमंडलीकरण का स्वरूप :

भूमंडलीकरण को वैश्वीकरण,खगोलीकरण, उदारीकरण, ग्लोबलाइजेशन तथा ग्लोबल विलेज कहा जाता है। "भूमंडलीकरण शब्द अंतरराष्ट्रीय सहायता केंद्र, मानवाधिकार आयोग, तकनीकी प्रगति, उदारीकरण, विश्वग्राम आदि का समेकित नाम है।"[1] वस्तुत: यह भूमंडलीकरण क्या है ? भूमंडलीकरण को किसी सर्व सामान्य परिभाषा में नहीं बांधा जा सकता। तकनीकी और संचार क्रांति ने विश्व को समेटकर एक विश्वग्राम मतलब 'ग्लोबल विलेज' में बदल दिया है, उसे ही भूमंडलीकरण कहते हैं। सामान्यतः विश्व के विभिन्न देशों के बीच आर्थिक संबंधों सहयोग और विनिमय को व्यापक तथा घोराही लेने की प्रक्रिया को कहते हैं व्यापार में यह विश्व व्यापार को निर्बंध विस्तार देने की प्रक्रिया है लेकिन कोई भी सरल धारणा व्यवहार में सरल नहीं रहती भूमंडलीकरण का मतलब है मुक्त व्यापार अर्थात विकसित देशों से विकासशील और पिछड़े देशों में वस्तुओं का खुला आयात। विकासशील देशों और पिछड़े देशों के बाजार में पूंजीवादी

देशों की वस्तुएं निर्बाध रुप से आने लगती है। पूंजीवाद में उपभोक्ता वस्तुओं का अनियंत्रित उत्पादन होता है। उसके लिए बाजार का विस्तार होता है। भोगप्रवृत्ति को प्रोत्साहित किया जाता है।

भूमंडलीकरण और भारतीय किसान :

वैश्वीकरणीय हमले के प्रतिरोध में कवि मंगलेश डबराल, वीरेन डंगवाल, नागार्जुन, गोरख पांडे के साथ-साथ नई पीढ़ी में सुरेश सेन, निशांत, विनय दुबे, आशुतोष दुबे, विपिन बिहारी, निर्मला पुतुल, रामदयाल मुंडा और विपिन मणि खड़े नजर आते हैं।

वैश्वीकरण का दुष्प्रभाव सबसे अधिक किसानों, दलितों, आदिवासियों पर ही पड़नेवाला है। उद्योगपतियों ने किसानों से उनकी जमीन छीनकर सेज सजाये है। सेज के नाम पर देश में एक दूसरा ही देश बनता जा रहा है। ऋणी किसान बेहाल है। उमाशंकर चौधरी जी ने खेत की बर्बादी और किसान की आत्महत्या का वर्णन 'किसान बैठा है खेत की आड़ पर' इस कविता में इस प्रकार किया है - "वह बूढ़ा किसान/ जिसके खेत में पड़ चुका है सूखा/ जिसकी फसल हो चुकी है सूखकर खर-पतवार/ जिसके जवान बेटे ने अपने पीछे/ पत्नी और दो बेटियों को छोड़ लगा दिया है गले में फंदा।"[3] किसान को भारतीय समाज का मेरुदंड कहा जाता है। उसका अस्तित्व आज के इस परिप्रेक्ष्य में धूमिल -सा बन गया है। वह औपनिवेशिक व्यवस्था का सर्वाधिक शोषित एवं उत्पीड़ित वर्ग है। वह अब देशी बीजों का इस्तेमाल अपनी खेती में नहीं करता हैं। क्योंकि बहुराष्ट्रीय कंपनीया देशी बीजों की जगह अपने नरेंद्र बीज लाकर किसानों को प्रदान कर रही है। हमारे देशी शांति कुटकी और बजरे की जगह अब सोयाबीन का साम्राज्य फैल पड़ा है। भारत का परंपरागत खेत इस माहौल में फार्म हाउस में परिणित हो रहा है। इस प्रकार देशी बीजों पर होनेवाले राष्ट्रीय कंपनियों के अतिक्रमण का यथार्थ 'नये बीज का बीजगणित' कविता में सुशील कुमार ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है -

"तमाम असहमतियों के बीच/ किसानों ने अपने घुटने टेक दिए हैं/नरेंद्र बीज के करार पर/सरकार ने दस्तखत का दिये हैं/ बहुराष्ट्रीय कंपनियों के खेतों में/अब नये बीज गिरा रहे हैं/नये बीज अपने साथ/ नये संयंत्र, नयी तकनीक लाते हैं/ खेत फार्म हाउस में तब्दील हो रहे हैं/ परंपरागत खेतीदम तोड़ रही है/ क्योंकि जमीन सिर्फ अपनी है/ मण्डी तो उनकी है/क्योंकि बीज भी उनका है।"[4] रासायनिक उर्वरकों के कारण धरती बंजर बन रही है।

भूमंडलीकरण और आदिवासी समाज:

आदिवासियों को विकास के नाम पर उनकी भूमि और जंगलों से ही खदेड़ा जा रहा है, बेदखल किया जा रहा है। भारतीय आदिवासियों की प्रमुख समस्या विस्थापन की रही है। उन्हें सदियों से खदेड़ा जा रहा है। आज भी उन्हें खदेड़ने का तंत्र वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में जारी है। बस रुप और तरीका बदल गया है। उन्हें जंगल-जल- जमीन इन तीन महत्वपूर्ण उनके मूल अधिकारों से वंचित किया जा रहा है। विकास के नाम पर आज जंगल में उनके प्रवेश पर रोक लगा दी है। आदिवासी जहां बसते हैं वहां की धरती के भीतर खनिज संपदा होती है। उनके जंगलों में नानाविध रोगों पर इलाज करने के लिए अनमोल वनस्पतियां हैं, कीमती दवाइयां है। ऊपर नदीया और जंगल है। परंतु वैश्वीकरण के प्रभाव के कारण नदियां कोयले की धूल

से काली होकर प्रदुषित हो गई हैं। उनका जल प्रदूषित हो गया है। वामन शीला के शब्दों में - "सच्चा आदिवासी/ कटी पतंग की तरह भटक रहा है/कहते है हमारा देश/ 21वीं सदी की ओर बढ़ रहा है।"[5] आदिवासी समुदाय के साथ सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक धोखेबाजी किस कदर की जाती है इसका चित्रण शंकरलाल मीणा ने अपनी कविता में इस तरह किया है-

"हमारी संस्कृतिक जड़ता को/तोड़ने के लिए/ कोई चीज है सौदागर के पास/ माइकल जैक्सन मैडोना/एम.टी.ऊम. - बोल्ड एंड ब्यूटीफुल/इससे न टूटे तो फिर/ डायनासोर है डैगन है अनाकोंडा है। स्पीड न और इंडिपेंडस डे है।"[6]

भूमंडलीकरण और नारी :

बाजार मनुष्य के कामचेतना में हस्तक्षेप कर रहे है। यह लैंगिक उर्जा को व्यापार के हितार्थ उकसाता है। वस्तु के प्रति काम को जगाना विज्ञापन का लक्ष्य है। ब्राण्ड अम्बेसडरों के शरीर से काम की अभिव्यक्ति प्रस्तुत की जाती है और क्रेता उत्पादक को पसंद करते हैं। वह वस्तु की उपयोगिता देखकर नहीं बल्कि काम ही वस्तु खरीदने में प्रेरक बनाता है। नहाने का साबुन, विभिन्न सौंदर्य प्रसाधनों, चरबी कम करने की मशीनें, जीन्स, शेविंग क्रीम, ब्लेड, बनियान, अंडरवियर, शाम्पू आदि -आदि पुरुष उपयोगी वस्तुओं के विज्ञापनों का विश्व सुंदरी के अंग का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार बाजार ने स्त्री देह को केंद्र में लाकर रखा है। स्त्री शरीर को बाजार सभ्यता की पूंजी बनाया जा रहा है। भूमंडलीकरण के परिप्रेक्ष में स्त्री का स्थान कामोत्पादक माल से अधिक नहीं है। लीलाधर जुगड़ी 'विज्ञापन सुंदरी' कविता में भूमंडलीकृत नारी को इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं -

प्रेम ममता जैसी नदारद है कंपनियों की कठपुतलियां विज्ञापन सुंदरियां/ एक अकर्मण्य-सा परिधान बेचती हैं/एक अस्वीकार्य सा वस्त्र स्वीकार्य करवाती हैं/कम लंबाई वालों के बीच ज्यादा लंबी -लंबी बेजोड़ स्त्रिया/ जिनमें बौद्धिक सौंदर्य की तलाश उन्हें अबौध्दिक मान लेने से हुई है/ यह स्वत:स्फूर्त सौंदर्य की धनी भरोसे की स्त्रिया नहीं हैं।"[7]

भूमंडलीकरण और नव पूंजीवाद :

आज विश्व एक ऐसी जटिल अवस्था से गुजर रहा है। भूमंडलीकरण अब एक शब्द न रहकर एक संस्कृति बन गया है। भूमंडलीकरण का रिश्ता नव साम्राज्य वाद से है। भूमंडलीय अवस्था में पूंजी न का वर्चस्व पुरानी संस्कति को मिटाकर नई संस्कृति की स्थापना करता है। आज की

विश्व बाजार व्यवस्था में राष्ट्रीय पूंजी और अंतरराष्ट्रीय पूंजी की पारस्पारिकता इतनी बढी है कि अब दोनों एक हो गए है। पूंजीवाद का नया चेहरा ही सचमुच भूमंडलीकरण के रुप में आज हमारे सामने आया है। पूंजीवाद एक ऐसा बहुरूपिया है, जो हालात के मुताबिक अपना चेहरा बदलने में माहिर है। सर्वप्रथम इसने साम्राज्यवाद का मुखौटा लगाया। बाद में उसने भूमंडलीकरण का मुखौटा पहना और मुक्त व्यापार का नारा उन्होंने बाजारवादी संस्कृति को विकसित किया। जिंदगी की आपाधापी, पूंजी संग्रह, निजी उपभोग आदि के कारण खून के रिश्ते में भी दरार पड़ रही है। सगे संबंधी तथा मित्र आदि से मिलना -

जुलना लगभग समाप्त हो चुका है। एक दूसरे के सुख- दु:ख में सम्मिलित होना कल्पना मात्र बन गई है। बुढ़ापे में बच्चे से मिलने की चाह एवं उनसे न मिल पाने का दर्द अमृतलाल महान के 'अपनी कंदारा से' कविता के द्वारा इस प्रकार चित्रित हुआ है -

पर है बच्चे हैं कि स्वदेश में भी
परदेस जा बसे हो जैसे
आने का प्रोग्राम ही नहीं
बन पाता उनका किसी सप्ताहांत
पर ऐसे वीकेंड शायद कछुए होते हैं
लीप वर्ष की भांति
चार साल बाद आते हैं
कौन बताए जवान बच्चों को
इंतजार में बूढ़े मां-बाप कितने बुढ़ा जाते हैं।"[8]

मशीनी युग में मानवीय संवेदनाएं सिसकती हुई एवं व्यक्तिगत महत्वाकांक्षाएं धधकती हुई दिखाई देती है। कहने को वैश्वीकरण विश्व को एक गांव में बदलने की परिकल्पना है परंतु इस परिकल्पना में 'वसुधैव कुटुंबकम' का न भाव हैं न 'सर्वे संतु सुखिन:' का। मल्टीनेशनल कंपनियों की उंची पगार ने आदमी को जाति, धर्म, सांस्कृति, राष्ट्रीयता आदि से अलग कर दिया है। सबके साथ मनुष्य की आवश्यकताएं बढ़ी। अतः मनुष्य भी यंत्र हो गया। कवि जगदीश चतुर्वेदी 'बीसवी सदी के बाद' कविता में भविष्य के बारे में चिंता व्यक्त करते हुए कहते हैं -

"दो दशक के बाद ये नदियां न रहेगी गहरी
पहाड़ हो जाएंगे सपाट, शहर रेगिस्तान
एक ताबूत में बंद हो जाएगी संस्कृति
और सड़कों पर विचरेंगे रोबोट- यंत्र पुरुष।"[9]

भूमंडलीकर का एक रूप : बाजारवाद

आज की ग्लोबल दुनिया पर बहुराष्ट्रीय कंपनियों के सहयोग से पूंजीपतियों का राज चल रहा है। सूचना प्रौद्योगिकी प्रभावकारी हत्यार बनाकर मनुष्य को अधिक से अधिक विलासी, आरामदेही वस्तुओं का उपभोक्ता बनाया जा रहा है। सुविधाएं, सामान, सुख किसी भी प्रकार से प्राप्त करना बाजारवाद का प्रमुख लक्षण है और विज्ञापन बाजारवाद का अस्त्र है। जिसके माध्यम से उपभोक्तावादी संस्कृति को बढ़ावा मिलता है। बाजार का एकमात्र लक्ष्य है मुनाफा कमाना। विलासी वस्तुओं का मायाजाल इस पर विज्ञापन का जादू। बाजार में विज्ञापन के जरिए आवश्यक सभी प्रकार की वस्तुओं बनावटी मांग पैदा की जाती है, जैसे

"आजादी का मतलब है
बाजार से अपने पसंद की चीज चुनने की आजादी
और आपकी पसंद वे तय करते हैं जिसके पास उपकरणों का कायाबल विज्ञापनों का मायाबल

आपकी आजादी पसंद है उन्हें
चीजों का गुलाम बनाने की आजादी यांत्रिक सभ्यता के शीर्ष पर
उन्होंने केवल कंप्यूटर ही नहीं बनाए हैं
आपके दिमाग को भी कंप्यूटर में बदल दिया है
जिसका सॉफ्टवेयर वे सप्लाई करते हैं
घर बैठे होम डिलीवरी
मुक्त बिल्कुल मुक्त।"[10]

कवि उमा शंकर चौधरी जी ने बाजार कोई जादू को 'तुम्हारी अपनी संस्कृति' इस कविता में बखूबी चित्रित किया है। कवि के अनुसार बाजार के पास मनुष्य की इच्छाओं को मनवाने के कई तरीके होते हैं। लोगों को गुलाम बनाने के उसके पास ट्रिक्स है। अतः मनुष्य उसके प्रभाव से नहीं बच सकता। कवि मदन कश्यप के अनुसार आज के बाजारवादी वातावरण में मनुष्य खुद एक जोकर बन गया है। वे कहते हैं कि मनुष्य बाजार की ओर इतना आकर्षित है कि अपना काम तुरंत खत्म करके पूरा बाजार खरीद कर उसे घर में सजाना चाहता हैं।

"यह जल्दी पूरा करना चाहता है/ अपना सब कामकाज/अब सब कामकाज/ आज का बाजार बंद होने से पहले/पूरा बाजार खरीद लेना चाहता है/ अपने घर लगाना चाहता है/ दुनिया का खूबसूरत ताला/ दुनिया के सबसे ताकतवर आदमी को/बनाना चाहता है अपना अंगरक्षक।"[11]

निष्कर्ष :

पिछले दो दशकों में हिंदी कविता ने भूमंडलीकरण को अपना विषय बनाया हैं। वह कभी भूमंडलीकरण के खतरे को अच्छी तरह से जानते हैं। यह कवि भूमंडलीकरण के विरोधी नहीं है बल्कि उनके माध्यम से बाजारवादी एवं अपसंस्कृति का प्रसार करनेवाली मानसिकता का विरोध करते हैं। उनकी कविता मनुष्य को भूमंडलीकरण के खतरे से आगाह करती है। वह पूंजीवाद की नई संस्कृति, मुक्त बाजार व्यवस्था, बहुराष्ट्रीय कंपनियों का प्रभुत्व, विश्व बैंक का दबाव उपभोक्तावाद, बाजारवाद, उपनिवेशवाद आदि बुराईया ही नहीं दिखाती है तो वे उनसे दूर रहने का उपदेश भी देती है।

संदर्भ :

1) भूमंडलीकरण और हिंदी कविता, सं. डॉ. बाबू जोसेफ, अमन प्रकाशन, कानपुर पृ. 157

2) वहीं पृ. 186

3) उमाशंकर चौधरी, किसान बैठा है खेत की आड़ पर , पृ.23

4) सुशील कुमार, नए बीज का बीजगणित, पृ.57

5) सं. डॉ. उषा कीर्ति राणावत,आदिवासी केंद्रित हिंदी साहित्य, पृ.187

6) वही,पृ. 195

7)समकालीन भारतीय साहित्य, व्दैमासिक पत्रिका, जुलाई- अगस्त, 2011 पृ.46

8) कवि बद्रीनाथ, लोक में दर्ज है, पृ. 30

8)अमृतलाल महान, अपनी कंदारा से, पृ. 112

9)जगदीश चतुर्वेदी, 25 कविताएं, पल्लवी प्रकाशन दिल्ली,पृ. 58

10 ज्ञानेंद्रपति , आज़ादी और गुलामी, पृ.123

11) मदन कश्यप, जोकर पृ. 22